सत्यांश

बहुजन समाज पार्टी के सांसद शफीकुर्रहमान बर्क ने संसद के सत्रावसान पर वंदे मातरम् गायन के समय बहिर्गमन कर दिया। बाद में उन्होंने मीडिया के समक्ष दो परस्पर विरोधी बयान दिए। उन्होंने बताया कि मेरी तबीयत अचानक खराब होने लगी, जिस कारण बाहर निकलना पड़ा। फिर चिरपरिचित तर्क सामने रखा कि इस्लाम में एक ईश्वर के सिवा अन्य किसी की भी बंदगी का निषेध है। यह कोई नया तर्क नहीं है, बल्कि समय-समय पर इसका इस्तेमाल होता रहा है। इस्लाम ही नहीं, सारे धर्मग्रंथ अपने-अपने ढंग से नैतिकता के मानदंड स्थिर करते हैं। वहाँ बहुत-कुछ करणीय और बहुत-कुछ अकरणीय बताया गया है। जो धर्मावलंबी इन्हें जानते-मानते हैं, वे भी इनका पालन नफे नुकसान को देखकर ही करते हैं। अक्सर अपने स्थिर धर्म-संप्रदाय पर गर्व भी वही लोग व्यक्त करते हैं जो अपने-अपने धर्म से अधिकांशतः विमुख होते हैं। धर्म का डंका पीटना और बात है, धर्म को धारण करना और बात। इस्लाम में और किन-किन बातों की मनाही है, क्या उन पर अमल किया गया है? क्या वास्तव में ईश्वर की बंदगी के अतिरिक्त बाकी किसी भी तरह की बंदगी से धर्मावलंबी मुक्त हैं। खुशामद, चापलूसी, स्वार्थवश सत्कार-मालार्पण यह सब नेताओं, अधिकारियों, कार्यकर्ताओं द्वारा चलता ही है, यह सब बंदगी का ही अपभ्रंश और विकृत रूप है, जो किसी राज्य-राष्ट्र के आदर-पूजन से लाख-लाख गुना क्षुद्रतर है, फिर भी यह सब होता है और इसे करने में इस्लाम धर्मावलंबी भी पीछे नहीं हैं। ईश्वर से परे बंदगी का निषेध अपने विकृत रूप में प्रचलित हो गया है।

ईश्वर की सत्ता ही परम, अक्षुण्ण व सतत विद्यमान है, बाकी सत्ताएँ उसी के अधीन हैं। इसलिए ईश्वर की बंदगी में ही सबकी बंदगी है। ईश्वर की बंदगी के इतर किसी अन्य की बंदगी की जरूरत नहीं। बात बहुत सही है और अन्य धर्मों में भी दूसरे रूपों में ऐसी ही स्थापनाएँ हैं। हिन्दू धर्म में उन बहुत-सारी चीजों को जो जीवन-जगत के लिए अनिवार्य हैं, उन्हें आदरणीय ही नहीं, पूजनीय स्थान दिया गया है। अग्नि, वायु, विद्या, धन, शक्ति, सूर्य, पृथ्वी, नक्षत्र, नाग, नदी, पर्वत आदि को देव या ईश्वर तुल्य मानकर पूजने की परम्परा है। चर-अचर पदार्थों, पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं को भी देवतुल्य माना गया है। अनेक देवी-देवताओं के पूजनीय होने के बावजूद ईश्वर की सर्वोच्चता पर प्रश्न चिन्ह नहीं है, वही एक सत्य है, सर्वसंचालक, सर्वशक्तिमान है।

वर्तमान में सत्ता के असंख्य मानव निर्मित केन्द्र बनते जा रहे हैं जिनकी सत्ता के सम्मुख नतमस्तक हुए बिना, उनसे समझौता किए बिना, झूठी-ऊपरी ही सही, उनकी खुशामद किए बिना अपने को टिकाये रखने की चुनौती खड़ी हो गई है। यही नहीं, हर आदमी अपने छोटे-बड़े दायरे में स्वयं सत्ता-केन्द्र बनाने के लिए लालायित है और इस रूप में अपनी 'आराधना' कराने को उद्यत-उद्धत भी। हार्दिक बंदगी का एकमात्र हकदार सर्वनियामक ईश्वर के अतिरिक्त और कोई नहीं, इससे किसे गुरेज हो सकता है, लेकिन अन्य आदर-सम्मान के पात्र तो हो सकते हैं। जो मुँह से वंदे मातरम् गा रहे होते हैं, वे वास्तव में देश-राष्ट्र की उपासना का मौखिक प्रमाण तो दे रहे होते हैं, लेकिन अनेकानेक बार उनके कार्य देश-राष्ट्र की इज्जत-आबरू लूटने का ही होता है, अतः मुँह की बंदगी से अधिक महत्त्व कार्य-व्यवहार का है।

आजकल जन्मभूमि-मातृभूमि की अवधारणा देश या राष्ट्र से जुड़ी है। सांस्कृतिक भूगोल और शासकीय सीमाएँ मातृभूमि मानी जाती हैं। जहाँ तक धरती माता का सवाल है तो वह अखण्ड्य एवं एक है, लेकिन सत्ता-सरकार-राजनीति द्वारा भूमि का विखंडन हुआ है। जितनी सत्ता-सरकारें, जितने देश-राष्ट्र, उतनी जन्मभूमियाँ, मातृभूमियाँ हैं। जो जिस देश में जन्म लिया है, वह उसकी मातृभूमि-जन्मभूमि है, राष्ट्रीयता उसकी पहचान है, पर ऐसा बँटवारा नैसर्गिक नहीं है। यह शासन-सत्ताओं के बनने-बिगड़ने तक संकुचित है। नैसर्गिक रूप से सारी वसुधा एक है, यह भू-लोक, पृथ्वी-लोक अखंडित है। वैसे बँटने को तो घर के कमरे-कमरे को भी जन्म-स्थान के आधार पर बाँटा जा सकता है, जिस कमरे में जन्म हुआ, वह जन्म स्थान, जन्मभूमि हुई। इसी प्रकार जिस घर-मकान, गाँव, शहर, प्रखंड, जिला, राज्य, देश में जन्म हुआ है, वह जन्म स्थान गृहभूमि ही ठहरती है। जैसे तहसील, जिला, राज्य शासन की ईकाई है, वैसे राष्ट्र भी, परंतु राष्ट्र की सीमा पर धरती का कोई खण्ड नहीं है।

वस्तुतः जन्मभूमि, मातृभूमि, पितृभूमि, कर्मभूमि का निर्धारण कहाँ से, कितनी दूर से देखा जा रहा है, उस पर निर्भर करता है। दूसरे जिला या राज्य से देखने पर पूरा गृह-जिला या गृहराज्य अपना लगता है, विदेश में जाकर देखने पर पूरा स्वदेश अपना लगता है। देश-विदेश से ऊपर जाकर देखने पर पूरी वैश्विक वसुधा ही अपनी जन्मभूमि लगेगी, पर देश-विदेश से ऊपर जाकर देखने वाला मनुष्य कहाँ है और संभवतः जिसने देखा होगा, उसकी वाणी कहाँ है? पौराणिक गाथाओं में जब अन्य लोकों के प्राणी आपस में बातें करते हैं तो वे पूरी धरती के लिए भू-लोक या पृथ्वीलोक का ही संबोधन करते हैं। इसलिए जन्मभूमि का विभाजन, संकुचन, विस्तार हमारे नजरिये और संस्कार पर निर्भर करता है। पृथ्वी का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जो हमारी 'जन्मभूमि' से पृथक् हो। विभाजन के हिस्से करने वाली मेंड़, दीवार, सरहद की रेखाएँ भूमिपतियों को विभाजित करती हैं, भूमि को नहीं। मनुष्य भूमि-पुत्र है, अतः उसके लिए पूरी धरा ही आदरणीय है। सिर्फ स्वार्थों के लिए जमीन के टुकड़े-टुकड़े करने अथवा मिलाने से भूमि की अखण्डता न तो खंडित होती है और न परिपुष्ट होती है। इसलिए महत्त्व केवल वंदे मातरम् गाने का नहीं, वरन् वसुंधरा के प्रति कुटुम्ब भाव से जीने का है। जो गाने की केवल औपचारिकता निभाते हैं, वे भी कोई बड़े देशभक्त नहीं हो जाते। फिर बेमन, अरुचि व दिखावे के लिए जबर्दस्ती गाने के बनिस्बत न गाना भी कोई बड़ा अपराध नहीं है।